Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

संगीत और मनोवैज्ञानिक सद्भाव के सहजीवन पर अध्ययन

RAHUL

Research Scholar, Guru Nanak Dev University Amritsar Punjab

सार

इस व्यापक अध्ययन में हम संगीत और मनोवैज्ञानिक सद्भाव के महत्वपूर्ण रिश्ते की गहराईयों में खुद को डूबाते हैं। हम इस अध्ययन के माध्यम से संगीत की मानव मानसिकता पर कैसे प्रभाव डालता है और मनोवैज्ञानिक सद्भाव को कैसे बढ़ावा देता है, इसे जांचते हैं। हमारा उद्देश्य यह समझना है कि संगीत कैसे मानव भावनाओं और मानसिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डालता है और कैसे हम मनोवैज्ञानिक सद्भाव के माध्यम से इसे समझ सकते हैं। यह अध्ययन संगीत और मानव वैज्ञानिक दोनों क्षेत्रों के बीच एक सर्वांगीक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है जो हमारे सामाजिक और मानसिक स्वास्थ्य को समृद्धि और सांत्वना प्रदान कर सकता है।

मुख्य शब्द - संगीत, मनोवैज्ञानिक सद्भाव, अध्ययन, प्रभाव, रिश्तों, हाल चाल

संगीत

संगीत का इतिहास बहुत पुराना है। जिस प्रकार आदिम युग में प्रागैतिहासिक, ऋग्वैदिक (क्लासिकल), वैदिक, मध्य, वर्तमान इत्यादि सभी युगों में मानव सभ्यता के क्रम-विकास का इतिहास अंकित है। जिस प्रकार किसी मनुष्य के जीवन का मूल्यांकन अर्थात जीवनकथा, उसकी बाल्यावस्था के विषय में कुछ प्रकाश न डालने से अपूर्ण रह जाती है। उसी प्रकार संगीत का इतिहास भी उसके मूल को जाने बिना अधूरा ही है। विश्वकवि रविन्द्रनाथ ने कहा है कि ‘‘आरम्भ का भी आरम्भ होता है।‘‘

संगीत की परिभाषा

‘‘गीत वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते।‘‘

संगीत रत्नाकर

संगीत एक अन्विति है, जिसमें गीत, वाद्य तथा नृत्य तीनों का समावेश है।[1]

प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में ‘सम्यक् गीतम् के रूप में संगीत की व्याख्या की गयी है। ‘सम्‘ उपसर्ग संपूर्णता का भी बोधक है। गीत तभी संपूर्ण रूप से प्रभावदायक होता है, जब उसके साथ उसके अन्य अंगो का भी प्रयोग होगा। ‘गी‘ क्रिया में ‘क्त‘ प्रत्यय लगाने पर गीत की उत्पत्ति होती है। ‘‘किसी भी पद को मंजुल स्वरों के साथ गाना गायन कहलाता है।‘‘[2]

प्राचीन काल से वर्तमान काल तक संगीत को जिन शब्दों में परिभाषित किया है। यह निम्न है। वैदिक काल के संहिताओं, ब्राह्मण ग्रन्थों, प्रतिशाख्यों, व्याकरण और पुराणादि के द्वारा संगीत विषयक सामग्री मिलती है। संगीत के गायन-वादन के माध्यम से देवताओं की आराधना की जाती थी एवं मोक्ष प्राप्ति का माध्यम माना जाता था।[3] परन्तु धीरे-धीरे संगीत को केवल मोक्ष का साधन न मानकर उसे जीवन की प्रगति का माध्यम भी समझा जाने लगा।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

संगीत का जन्म सृष्टि की रचना के साथ ही हुआ है, क्योंकि जब बच्चा जन्म लेता है, तो संसार में आते ही चीखता है। उस नवजात शिशु के माता-पिता और उनके मित्र व सम्बन्धी इस स्वाभाविक चीख की प्रतीक्षा करते है, और जब वह शिशु चीखकर अपनी पहली ध्वनि वायुमण्डल में विस्फुटित कर देता है, तो उसकी माँ भी हँसती-मुस्कुराती और आनन्द के आँसू बहाती है और समीप में

खड़े डॉक्टर और शुभ-चिन्तक दर्शक लोग भी नवजात शिशु को सर्वप्रथम संगीतमय चीख पर बधाई देते और आनन्द का अनुभव करते हैं।[4]

अतः संगीत एक अमूर्त कला है, जिसका सम्बन्ध संवेदना से है। जब भावों की अभिव्यक्ति स्वर, लय व ताल की मधुरता के साथ होती है, तब संगीत कला का जन्म होता है। संगीत एक अथाह सागर के समान है, जिसकी स्वर लहरियों में डूबकर मानव अपने आपको कृतार्थ मानता है। संगीत स्वरों का अपार भण्डार है, जिसमें से न जाने कितने ही स्वर-समूह बनते है, परन्तु हर बार नवीनता बनी रहती है। यह विचित्रता व विशेषता केवल संगीत में ही निहित है, इसलिए संगीत विश्व के अन्य संगीत प्रकारों में श्रेष्ठ है।‘[5] संगीत विश्व में प्राचीनतम है, और यह शताब्दियों की दासता के बावजूद अपनी श्रेष्ठता, परिपक्वता, गहराई एवं निष्ठावान कलाकारों की लगन के कारण बिखरने नहीं पाई, जो हमें धरोहर के रूप में विरासत में मिली है।[6]

अतः संगीत एक ऐसी विद्या है, जो मानव ही नहीं अपितु समस्त जीव जन्तु एवं वनस्पति जगत को भी अपनी कला के द्वारा सब कुछ भुला देने के लिए विवश कर देती है।

संगीत आदि काल से ही जन जीवन के आत्मिक उल्लास और सुखानूभूतियों की ललित अभिव्यक्ति का मुधरतम माध्यम रहा है। प्राचीन काल में जब पुस्तकों और चलचित्रों आदि का अभाव था, तब दैनिक परिश्रम के बाद नर-नारी जब शान्त चित होकर सामूहिक सामवेद गायन में तल्लीन हो जाते थे, तो उस समय उसके हृदय के तार-तार झंकृत हो उठते थे।[7] विश्व के कण-कण में संगीत परमात्मा के अंश की तरह व्याप्त है। संभवतः देवी-देवताओं को प्रसन्न कर मनवांछित फल प्राप्ति हेतु ऋषियों, मुनियों, पीरों-फकीरों ने भी इस अनोखी कला का भरपूर प्रयोग किया।

‘‘वेदानां सामवेदोऽस्मि ‘‘

अर्थात् वेदों में मैं सामवेद हूँ।

अतः देवी-देवताओं को भी यह कला अत्यन्त प्रिय थी, इसके अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। जैसे-मंदिरों तथा गुरुद्वारों में शंख, घंटियां, मंजीरे तथा अनेक वाद्यों को बजाकर आराधना करना इत्यादि।[8]

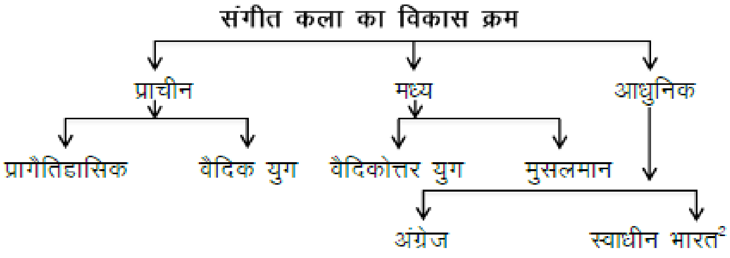

[9]

संगीत एवं मनोविज्ञान का अंतः संबंध

कला की अभिव्यक्ति मानव जीवन में सृष्टि के प्रादुर्भाव के समय से ही रही है। अपनी अंतर्भावनाओं को व्यक्त करने के लिए मनुष्य ने विभिन्न माध्यमों का प्रारंभ से ही सहारा लेना शुरू किया। अपने इर्द-गिर्द घटने वाली हर घंटनाओं को, चाहे वह सुख देने वाला हो, व्यक्त करने में मानव ने प्रकृति का सशक्त सहारा भी सृष्टि के उद्भव काल से ही लेना प्रारंभ किया है। यह उसकी विकसित हो रही मानसिकता ही थी, कि दुःख के समय में रोना या विषाद युक्त चिल्लाना तथा सुख की घटनाओं में विभिन्न प्रकार की हर्षयुक्त ध्वनि उत्पादित कर अपनी भावनाओं को व्यक्त करता आया है।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

कालान्तर में सृष्टि के विकास के साथ-साथ संगीत का भी विकास हुआ। स्वर और लय से अभिभूत संगीत ने विश्व इतिहास के प्रत्येक काल में अपनी विशिष्टता से मानव सभ्यता एवं संस्कृति को प्रभावित किया है। जीवन के हर क्षेत्र में संगीत की महत्ता प्रारंभ से ही मानी जाती है। चाहे हर्ष व्यक्त करना हो या विषाद, चाहे रंगमहल हो या लड़ाई का मैदान - एक विशेष प्रकार का संगीत प्रस्तुत होते ही उस भावना का आभास होने लगता है। हर उन भावनाओं को व्यक्त करने के पीछे कुछ विशिष्ट मानसिकता का आभास होता है. जिसके माध्यम से अलग-अलग प्रकार की भावनायें व्यक्त होती हैं। क्योंकि संगीत मानव जीवन के हर पहलू को प्राचीन काल से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती आ रही है। समाज के प्रत्येक कार्य में आज संगीत की महत्ता सभी को ज्ञात है। वैवाहिक कार्य हो या धार्मिक कार्य, लड़ाई का मैदान हो या शांति के लिए कार्य हो या फिर कोई भी संस्कार-संगीत की आवश्यकता एवं महत्ता प्रत्येक स्थान पर है।

संगीत की महत्ता निम्न पाँच अंगों के अंतर्गत विशेष रूप से उल्लेखनीय है-

1. दार्शनिक
2. मनोवैज्ञानिक
3. सामाजिक
4 शैक्षणिक, तथा
5. अन्तर्राष्ट्रीय संबंध।

जीवन के दर्शन, धर्म से संगीत सीधे जुड़ा हुआ है। साकार, निर्गुण, पर ब्रह्म की प्राप्ति तो नाद साधना के द्वारा ही मानी गयी है और भक्तिमार्ग से ओत-प्रोत संगीत मोक्ष-प्राप्ति का सुगम साधन है, जो हमारे दर्शन की मूल धारणा है।

समाज से भी सीधे संबंधित है हमारा संगीत मानव जीवन का प्रत्येक क्षण संगीत पर आधारित है। मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक संगीत के ताने-बाने में आबद्ध है। जहाँ तक मनोवैज्ञानिक महत्ता का प्रश्न है, इसका सीधा संबंध संगीत शिक्षण से है। वैसे बहुत कुछ यह संगीत के प्रदर्शन पक्ष को भी प्रभावित करता है। क्योंकि संगीत चूँकि एक प्रदर्शन कला है, अतः प्रदर्शन के लिए एक स्वस्थ मानसिकता एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से तैयारी भी अत्यंत आवश्यक है। शिक्षण से संबंधित होने का प्रमुख कारण यह है कि शिक्षा मनुष्य में संतुलित व्यक्तित्व के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। इसमें विद्यार्थी की प्रवृत्ति, रूचि, बुद्धिमत्ता इत्यादि सभी गुणें के परिप्रेक्ष्य में शिक्षण की आवश्यकता पर ध्यान दिया जाता है। इतना ही नहीं मनोवैज्ञानिक ढंग से संगीत शिक्षण में व्यवहार की भी अहम भूमिका रहती है और यही व्यवहार संगीत के मनोवैज्ञानिक के अंतर्गत त्वरित प्रगति के लिये अत्यंत आवश्यक माना जाता है। जहाँ तक अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का प्रश्न है, संगीत स्वर-लय से ओत-प्रोत होने के कारण विभिन्न देशों के मध्य सांस्कृतिक संबंधों के स्थापित करने एवं जहाँ स्थापित है उन्हें और प्रगाढ़ करने हेतु एक सशक्त सेतु का कार्य करता आ रहा है क्योंकि स्वर लय भाषा से परे होने के कारण प्रायः प्रत्येक मानव में हर्षातिरेक उत्पन्न करती है, चाहे वे किसी भी देश के क्यों न हो।

संगीत रत्नाकर में भी कहा गया है कि भूत को चेतन उपलब्ध करवाने वाला, सर्वत्र व्याप्त रहने वाला, ब्रह्मण्ड को जीवन स्वरूप देनेवाला तथा आनंद पूंजी की उत्पत्ति का अद्वितीय नाद स्वरूप का मूल ही प्रकृति का स्रोत तथा उसकी गति है। यहाँ 'नाद संगीत से पहले की भाव तथा लयात्मक ध्वनि की वह अनुभूति है जो अंतरिक्ष के साथ-साथ मनस को भी व्यवस्थित प्राण देती है। अंतरिक्ष के तल तथा मुख्य ऊर्जा स्रोत ही जीव जगत के व्यवहार तथा उनकी गति को तय करते है। यहाँ शारंगदेव द्वारा आदर तथा

अभिव्यक्ति (ज्ञान) के प्रकटीकरण का मनोभाव तथा सृष्टि के प्रति सम्मान तथा समर्पण की उनकी प्रकृति का स्रोत-नाद ब्रह्म के आभार से गद्गद है।‘[10]

‘‘मैक्समूलर आदि भाषातत्वज्ञों की धारणा है कि भाषा की उत्पत्ति हुई है क्योंकि विकास की दृष्टि से यह स्पष्ट है कि अन्य जीवों की भाँति मनुष्य को भी पहले केवल शुद्ध और व्यापक भावों को व्यक्त करने की प्रेरणा होती होगी जो केवल स्वर संघातो से किया जाता होगा। पहले मनुष्य एक विशेष स्वर संघात से प्रेम, दूसरे स्वर संघात से ईर्ष्या और किसी तीसरे स्वर संघात से विजय की भावना की घोषणा करता होगा।‘‘[11] यहाँ भी भाषा से पहले भाग अर्थात् संगीत (लयात्मक ध्वनियों) का ही उल्लेख प्रकट है।

हम कह सकते हैं कि आदिम युग से ही भाव, विचार से पहले मनस में अपना स्थान बना चुके थे क्योंकि भाव ही ‘मनस‘ को जिज्ञास की व्याकुलता प्रदान करते हैं, भले वह भाव अनुभव के अचेतन पक्ष या प्राकृतिक लक्षण के चिह्न हो निश्चित ध्वनियों की मात्रा, स्वर राग या शब्द संगीत के महत्वपूर्ण अंग हैं। इन सभी से उत्पन्न प्रत्येक खनक (कंपन) किसी न किसी भाव को (रस) को स्वयं संजोए रहती है। जैसे सावन में बादलों में उत्पन्न बिजली की चमक तथा उसकी ध्वनि मनुष्य के भीतर छिपी व्याकुलता तथा व्यग्रता के भाव को सामने लाती है, वैसे ही इस बिजली की गड़ाहट के बाद वर्षा की एक मीठी फुहार स्पर्श, सान्निध्य और संतोष के लिए उत्तेजित दिखाई पड़ती है। वास्तव में पहले का व्यग्र तथा व्याकुल भाव भी एक विशेष मानसिक स्थिति का द्योतक है और बाद की संतुष्टि की क्रिया अर्थात् स्पर्श, सान्निध्य और संतोष भी एक मनोभाव है, जो कही अंतर्मन में कुलबुला रहा होता है। मनुष्य का कोई भी भाव या प्रतिक्रिया अचानक ही जन्म नहीं लेते, उनकी पृष्ठभूमि कहीं न कहीं चेतन या अवचेतन मन में पहले से ही निर्मित हो चुकी होती है।‘[12]

‘‘मनस‘ स्वयं में कोई जैविक या प्रतिक्रियात्मक क्रिया नहीं है, यह केवल अनुभवों तथा भावनाओं द्वारा प्रतिपादित क्रियाओं का ही उपनाम है। अलग-अलग मनुष्यों द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार से सोचने समझने विचार करने तथा कामना करने की विभिन्न अवस्थाओं तथा भावों से उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रिया ही उनके मनोविज्ञान का प्रत्यक्ष तथा सही विश्लेषण है कि मन अर्थात् मनस का वैज्ञानिक अर्थ, मनुष्य के मस्तिक से ही है।[13]

भारतीय मनोविज्ञान में ‘मनस‘ शब्द का प्रयोग केवल यंत्र के रूप में किया गया हैं। भाषा की दृष्टि से मन, हृदय, समझ, प्रत्यक्ष ज्ञान, प्रज्ञा आदि के अर्थ में लिया है। साहित्य में इसे रूचि, इच्छा, विचार, कामना, संकल्प, कर्म, प्रयोजन, कल्पना तथा सोच के रूप में प्रयोग में लाया जाता रहा है।

प्रत्येक मनुष्य तीन अवस्थाओं में जीवन जीता है। ये तीन अवस्थाएँ हैं-

1. चेतनावस्था
2. अवचेतनावस्था
3. अचेतन अवस्था

इन तीनों ही अवस्थाओं में भाव अथवा सोचने की प्रक्रिया हमेशा बनी रहती है, भले ही वह प्रकट हो या न हो। इन्हीं भावों के अनुरूप व्यवहार तथा प्रतिक्रिया जन्म लेती है। इनमें राग, आसंग, तृष्णा, काम, खुशी, दुख, क्रोध, द्वेष, भक्ति, आदर, दया, शान्ति, विषाद, लोभ, शंका, संभोग इत्यादि भाव प्रमुख हैं। प्रसिद्ध वैज्ञानिकों जे० वाल्टन, जी० हार्टमैन, फ्रायड, ए० जर शिल्ड, बूडवर्थ, लविनसन, ऑलपोर्ट, मार्टिन प्रिंस, वारिंग आदि ने इस सत्य को प्रमाणित भी किया है।‘[14]

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

संगीत मनुष्य की आरंभिक अवस्था से जुड़ा हुआ है। प्रकृति में होने वाली समस्त क्रियाओं तथा बदलावों ने मानव को आश्चर्य चकित किया। तत्पश्चात् उसके मस्तिष्क ने अपनी स्वाभाविक जैविक क्रिया की और मनुष्य अनजाने में ही जिज्ञासा के मोहपाश में बंधता चला गया। मस्तिष्क (मनन) का कार्य ही सोच तथा शंका को जन्म देता है और यही सोच तथा शंका, प्रगति तथा परिवर्तन की आधारभूत भूमि भी है। ब्राण्ड में उपस्थित समस्त ध्वनियों ने मनुष्य को अलग-अलग वातावरण तथा प्रति क्रियाओं में बाँटा तत् पश्चात् उसने स्वयं ही अनुभव किया कि हर ध्वनि पर उसकी प्रतिक्रिया, उसके भीतर एक अलग भाव तथा उत्तेजना को जन्म देती है। यहाँ भी उसे संगीत द्वारा अपने मनोविज्ञान पर होने वाले प्रभाव का पता नहीं था किन्तु यह क्रिया स्वाभाविक तथा प्राकृतिक थी। इन्हीं अलग-अलग भावों ने अलग-अलग ध्वनियों की (अमूर्त) श्रेणी तथा उनकी (मूर्त) पहचान बनाई जो बाद में एक निरंतर खोज तथा जिज्ञासा के कारण स्वर राग तथा संगीत के शुद्ध रूप में सामने आई। संगीत शास्त्रों में स्वरों का जीव-जंतुओं की बोलियों से संबंध इसी बात का प्रमाण है।

इस समय तक मनुष्य केवल भाव तथा भावनाओं को ही पहचान सका था संबंध, सत्संग, संवाद तथा संबोधन की समस्त प्रतिक्रियाओं को वह दैवीय इच्छा मानता था और इसी के कारण विवाह, वासना, प्रेम, प्रलाप तथा प्रताड़ता को वह ईश्वर द्वारा रचित भाग्य ही मानता था। आज भी यह मान्यता कई मनुष्यों के विश्वास का हिस्सा है जैसे दुल्हा-दुल्हन की जोड़ी, प्रेम, जन्म तथा मृत्यु इत्यादि का लेखा ईश्वर के घर में रचा जाता है। वास्तव में समर्पण के ये समस्त व्यवहार तथा विचार मनोविज्ञान का ही एक हिस्सा है।

मानव के जन्म के साथ ही शरीर एक नए वातावरण बदलाव तथा स्पर्श के संपर्क में आता है। नवजात शिशु का मनोविज्ञान इसकी प्रतिक्रिया रोकर देता है। यहाँ पीड़ा तथा वातावरण में हुए परिवर्तन को पहचानने की क्षमता तथा उसके विरूद्ध उत्पन्न प्रतिक्रिया, सीधे-सीधे मस्तिष्क से जुड़ी है अर्थात् उसका यह सहज प्रतिक्रियात्मक मनोविज्ञान, जन्म के समय उपस्थित है तथा रोने की क्रिया अथवा व्यवहार उस नवजात का अनुभव तथा भाव।

यहाँ यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य के जन्म के साथ ही उसके भाव, उसकी भावना तथा उसकी अभिव्यक्ति भी जन्म ले लेती है। किसी भी मनुष्य को अपने जन्म की तिथि या समय भले ही पता न हो किन्तु उसे बालावस्था की कुछ धुंधली सी मधुर स्मृतियाँ अवश्य स्मरण रहती है। बाल्यावस्था में ही संगीत की पृष्ठभूमि से संचित लोरी, गीत, पूजा, यज्ञ, इबादत या अन्य कोई भी लयात्मक ध्वनि, उसके विकास के साथ उससे जुड़ती चली जाती है और इसी कारणवश वह अनजाने में ही संगीत तथा साधना से जुड़ता चला जाता हैं। यहाँ संगीत द्वारा भावनात्मक संबंध तथा विचारों के साथ-साथ, उसके व्यक्तित्व के निर्माण का शुभारंभ भी हो जाता है जो आगे चलकर उसे अन्य लोगों से अलग (विशेष) भी करता है। मनुष्य के दबे हुए विशुद्ध भावों एवं उसकी अपूर्ण इच्छाओं की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति भी 'अश्रु' ही है इसीलिए किसी भी मानव में रोने अथवा भावुक होने की प्रतिक्रिया को विशुद्ध तथा सहज माना जाता है। संगीत द्वारा जब भी मनुष्य के इस भाव को उद्वेलित किया जाता है तो एक विकसित तथा अनुभवी व्यक्ति भी किसी नवजात की तरह, जीवन में पीछे छूट चुकी भौतिक पीड़ाओं को मानवीय वेदना में बदलकर भाव को संतुष्टि तथा प्रकटी करण का पथ प्रदान करता है। यह तथ्य और सरल करने के लिए हम कुछ रागों तथा स्वरों का संक्षिप्त विश्लेषण भी कर सकते हैं जो मनुष्य में मार्मिक संवेदनाओं को जन्म देकर उसे उसके मनस में उपस्थित निराशा तथा नीरसता के व्यर्थ भावों से मुक्त कर देते है जैसे राग वागेश्री यह मध्य रात्रि में गाया जाने वाला राग है। यहाँ मध्य रात्रि से एकान्त, एकाकीपन तथा सन्नाटे का बोध होता है। यह संवेदनाओं और स्मृतियों के पुनर्जन्म का विशुद्ध प्रहर है। राग के कोमल गंधार तथा कोमल निषाद स्वर स्मृति तथा अन्य मार्मिक भावों को जन्म देने में सहायक होते हैं।

हर बार संगीत ने मनोविज्ञान को कुरेदा है तथा उसके उत्तर में उत्पन्न हुए नए मनोविज्ञान ने भी फिर से संगीत की जिज्ञासा को स्वरों रागों तथा ध्वनियों की नई खोजों तथा उनके तथा उनके विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग से शांत तथा सशक्त किया है। इसी खोज तथा जिज्ञासा की प्रवृत्ति के कारण, मानव का चित्र एक के बाद एक नए-नए प्रयोगों को जन्म देता चला गया। आईए इस महत्वपूर्ण विषय की मुठ्ठी को कुछ और खोला जाए तथा इसकी हथेली पर खिंची तथा आपस में गुँथी हुई संगीत तथा मनोविज्ञान की कुछ उन रेखाओं का अध्ययन किया जाए जो मानव के भाग्य (विकास) का महत्वपूर्ण कारण बनीं।

शरीर में विद्यमान वायु वेग को प्रतिक्रिया के स्वर तथा सिकुड़न को अपनाया तथा वायुवेग तथा काकू की क्रिया के अनुसार विभिन्न ध्वनियों तथा स्वरों का जन्म हुआ। वास्तव में मनुष्य द्वारा ताकत लगाकर बोलते या फुसफुसाकर उच्चारण करने की विभिन्न अवस्थाएँ तथा उनसे उत्पन्न ध्वनियों, शरीर में उपस्थित वायु वेग को, शरीर के ध्वनि सहायक अंगो द्वारा बाहा वातावरण में धकेलने का ही परिणाम है। इस प्रक्रिया में प्रत्येक भावनुरूप वायु (सॉस) से उत्पन्न हर एक स्वर या ध्वनि को पहचान कर उसे अपनी स्मरण शक्ति में संजोना तथा फिर उसे अपनी जीवन शैली में किसी विशेष स्मृति के साथ स्थापित करना, संगीत तथा मनोविज्ञान के ही दो कारण हैं।

अगर हम ध्यान से देखें तो आदिम युग के मानव ने ही अपने जीवन में, संगीत तथा मनोवैज्ञानिक का उपयोग सर्वाधिक किया। उस समय के मानव ने अपने मंगल अमंगल तक की सूचना का माध्यम जीवों के स्वरों को बनाया पक्षियों से ऋतु के बदलाव तथा ऋतुओं से मन में उत्पन्न होने वाले मनमोहक तथा मनभ्रामक भावों को जाना। यह समस्त लेन-देन का मनोविज्ञान, सतत बदलाव तथा खोज का ही प्रतिफल है। यहाँ स्वर, संगीत तथा ध्वनि सभी ने एक मार्गदर्शक का कार्य किया है।‘‘[15]

‘‘सिद्धान्त विज्ञान से पहले मानव का मनोविज्ञान ही उसकी सर्वश्रेष्ठ पूँजी थी। सूर्य, चन्द्रमा, तारे, ग्रहण दिन तथा रात, सभी उसकी जिज्ञासा का कारण थे। इनके प्रति अभिव्यक्ति के लिए उसके पास केवल आदर डर या ध्वनि से जुड़े भाव ही थे, जो उसके मनोविज्ञान के अनुरूप प्रकट होते थे। अपनी अर्थहीन ध्वनियों को ही अस्त्र बनाया। विश्व में कहीं भी मानव के अंग-प्रत्यंग उसका रोना, हँसना, खिलखिलाना तथा उसकी मूल ध्वनियाँ लगभग एक जैसी ही थीं। जबकि उसके द्वारा विकसित तथा निर्मित भाषा तथा संगीत अलग-अलग स्वरूपों में हैं। यहाँ यह तथ्य उजागर होता है कि शारीरिक संरचना तथा भावों का मंथन लगभग एक-सा होने पर भी उसके मनोविज्ञान तथा उसकी जिज्ञासा के तत्त्व भिन्न-भिन्न हैं। इसीलिए संगीत (लय) के मूलभूत तत्त्व सभी जगह एक से होते हुए भी उसके प्रकटीकरण तथा प्रयोग के आधार क्षेत्र भिन्न-भिन्न हैं। यह भिन्नता भौगोलिक तथा वातावरण की स्थितियों में अंतर का ही परिणाम है।[16]

अलग-अलग भावों को व्यक्त करती ध्वनियों में मनुष्य ने अपनी जिन-जिन शारीरिक मुद्राओं तथा मुख भावों को सर्वप्रथम जाना, वही आगे चलकर उसकी नृत्य कला की जन्मदात्री भी बनीं। इस क्रिया में उत्पन्न स्वर तथा उसकी ताल के अपरिपक्व रूप. सर्वप्रथम उसके भावों के रूप में उसके समक्ष आए। धीरे-धीरे उसका मनोविज्ञान परिष्कृत भावों को नृत्य तथा स्वर या संगीत के माध्यम से प्रस्तुत करने लगा तथा यहीं से एक मानव या सभ्यता की, अपने भाव को कला रूप में प्रकट करने की प्रथम कड़ी का शुभारंभ हुआ।

एक गायक भी आरंभ में गुरू, प्रकृति, अपनी कल्पना या फिर एक नए मनोविज्ञान से मिले स्वरों तथा सुरों को यूँ ही ढूंढता और फिर उन्हें स्वयं के मस्तिष्क में साधता है। इसमें भी साधक धीरे-धीरे अपने कंठ के तंतुओं तथा शरीर की नाड़ियों को एक निश्चित दिशा में निरंतर अभ्यास तथा विकास की गति प्रदान करता है तथा उन्हें एक निश्चित वायु वेग से अभ्यस्त करता है। तत् पश्चात् ही एक सटीक तथा सुधड़ स्वर का जन्म होता है।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

मानव के निरंतर विकसित होते मनोविज्ञान तथा संगीत में, मृत्यु पर शोक तथा विलाप के गीत तथा विवाह या जन्म जैसे प्रसन्नता के अवसर पर मंगलकारी गीत अथवा विशेष वाद्यों का चयन तथा प्रयोग की सामने आता है अर्थात् आज के रागों, स्वरों तथा संगीत के सटीक तथा सही भावों तथा रसों को, पूर्व के मानव ने पहले ही पहचान लिया था इसीलिए मानव जाति के सर्वाधिक निकट लोकगीतों में व्यवहार, आचरण, अवस्था. व्यवस्था, ऋतु दुख, तथा अन्य संस्कारों के लिए अलग-अलग गीत तथा राग-रागिनियाँ पाए जाते हैं। यहाँ मानव ने भिन्न-भिन्न परिस्थितियों तथा प्रकृति में बदलाव के साथ अपने हर नए मनोविज्ञान को जोडा तथा स्वयं को अभिव्यक्त करने का सबसे सरल माध्यम संगीत में ही खोजा। हम कह सकते हैं कि संवेग तथा अभिव्यक्ति के मनोविज्ञान तथा संगीत के सागर का तल, समस्त मानव जाति में एक साथ विकासित हुआ। मनुष्य की निरंतर खोज तथा कल्पना की प्रवृति ने उसे विध्वंस, युद्ध, जाति, वर्ग तथा स्तर का कड़वा स्वाद भी चखाया। इसी कारण विभिन्न क्रांतियों तथा विभीषिकाओं ने मानव के मनोविज्ञान के साथ-साथ संगीत में भी असाधारण परिवर्तन दिया। अत्यधिक उत्तेजना तथा चपलता पैदा करने वाले कई संगीत इसी का परिणाम है। दूसरी और यदि आज भी ध्यान से देखें, सुनें या पढ़े तो दुनिया के हर क्षेत्र का मूल आदिवासी या लोक संगीत गूढ़ता. ठहराव तथा प्रकृति के अत्यधिक निकट है। मनुष्य का मन अर्थात् मस्तिष्क, कल्पना तथा प्रयोग के लिए सदैव ही उद्वेलित रहा है और शायद इसलिए वह प्रकृति के परिवर्तन के नियम का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

ध्वनि, स्वर, शब्द या संगीत के अतिरिक्त भी कुछ है जो हमें सुनाई पड़ता है या यूँ कहे जो हमारे भीतर रहता है। शायद ये फिर वही मनोविज्ञान ही है जो चेतन, अवचेतन तथा अचेतन तीनों अवस्थाओं में जीवित रहता है। यही वह ‘नाद‘ है जो मानव को मानव से जोड़ने का सबसे ठोस यंत्र है।

संगीत के बारे में कहा गया है कि संगीत से इन्द्रिय जन्म मानसिक, बौद्धिक तथा अध्यात्मिक इन चारों स्तरों का आनंद प्राप्त होता है जब आनंद होता है तो वह मिश्रित होता है। उसकी कोई सीमा नहीं होती। यहाँ आनंद शब्द बहुत ही व्यापक रूप में है। आनंद से वंचित रहकर हम संगीत की कल्पना नहीं कर सकते। संगीत तथा भाव का अभिन्न संबंध हैं। संगीत में भाव निर्माण होते है या नहीं, असंभव है। संगीत में हमेशा सुखकर भाव का निर्माण होता है‘‘।[17]

संगीत ने आस्था तथा अराधना के मार्ग के साथ-साथ शासन तथा साहस की मानसिकता को भी ऊर्जा प्रदान की है। हर युग में, बदलते मनोविज्ञान के साथ, संगीत में भी परिवर्तन तथा प्रयोग की तीव्र इच्छा देखी गयी है। विदेशी शासकों, प्रांतीय रजवाड़ों, धनाढ्य वर्ग तथा जन-साधरण जैसे सभी पक्षों में संगीत ने अपने वर्चस्व को बनाए रखा है। इस क्रम में कई परिवर्तन भी हुए हैं तथा कभी कभी यह भोग विलास का माध्यम भी बना, फिर भी संगीत ने अपनी मूल भूमि तथा प्रकृति अर्थात् शुद्धता को नहीं छोड़ा। शायद इसीलिए हर बदलते मनोविज्ञान ने संगीत को ही अपना श्रेष्ठ सखा माना है।

किसी भी सभ्यता, संस्कृति या समय के प्रभाव से मानव का व्यवहार या मनोविज्ञान तो बदल सकता है किन्तु संगीत का धरातल, स्वाद, रस, अनुभूति, अनुसरण, आनंद, अभिव्यक्ति तथा उसकी आत्मा नहीं बदल सकती। यही वह सत्य है, जिसे मानव अपने मनोविज्ञान की सर्वश्रेष्ठ संपत्ति मानता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मनोविज्ञान का संगीत सर्वकालिका धरोहर है।

निष्कर्ष

इस व्यापक अध्ययन ने संगीत और मनोवैज्ञानिक सद्भाव के बीच के जटिल संबंधों पर प्रकाश डाला है। संगीत मानवीय भावनाओं और मानसिक कल्याण को किस प्रकार गहराई से प्रभावित करता है, इसकी सूक्ष्म जांच के माध्यम से, हमने इन दो डोमेन के बीच सहजीवी संबंध में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्राप्त की है। अध्ययन मानवीय भावनाओं, व्यवहारों और संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को आकार देने में संगीत की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करता है, एक समग्र परिप्रेक्ष्य प्रदान करता है जो हमारे सामाजिक और मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ाने में योगदान दे सकता है।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

ग्रंथ सूची

1. संगीत रत्नाकर प्रथम खण्ड, सुभद्रा चैधरी पृ0 12
2. संगीत का इतिहास, डॉ० स्वाति शर्मा, पृ० 1
3. संगीत का इतिहास, डॉ० स्वाति शर्मा, पृ० 152
4. संगीत का इतिहास प्रथम भाग- राम अवतार वीर पृ० 18, 19
5. संगीत का इतिहास (मूल तत्व एवं सिद्धान्त), डॉ. स्वाती शर्मा, पृ० 1
6. संगीत शिक्षण के विविध आयाम, डॉ. ऋषितोष कुमार, पृ० 31
7. मंच प्रदर्शन में कलाकार एवं श्रोता, हरीश कुमार तिवारी, पृ० 3
8. संगीत का इतिहास (आध्यात्मिक एवं दार्शनिक), डॉ. सुनिता शर्मा, पृ० 219
9. विश्व संगीत का इतिहास अमल कुमार दाश शर्मा, पृ० 1
10. विमल कुमार (डॉ०) सौन्दर्य शास्त्र के राल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1981. पृ013
11. तिवारी किरन (डॉ०). संगीत एवं मनोविज्ञान, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली. 2008 4063
12. सिंह ललित किशोर (प्रो०), ध्वनि और संगीत, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1962 (दूसरा सं०). 90111
13. तिवारी किरन (डॉ०), संगीत एवं मनोविज्ञान, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2008.. पृ004
14. तिवारी किरन (डॉ०). संगीत एवं मनोविज्ञान, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली. 2000
15. उमर मुहम्मद, भारतीय संस्कृति का मुसलमानों पर प्रभाव, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली. 1996, 40225
16. तिवारी किरन (डॉ०), संगीत एवं मनोविज्ञान 90 कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2008, पृ064
17. तिवारी किरन (टॉ०), संगीत एवं मनोविज्ञान, 90, कनिक पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली. 2008, 009-100